Research Paper | E-ISSN NO : 2455-295X | VOLUME : 9 | ISSUE : 3 | SPECIAL ISSUE MARCH-2023

''डॉ. रांगेय राघव के उपन्यासों में चित्रित सामाजिक समस्याऐं''

डॉ. गिरधारी परिहार
जोधपुर.

ABSTRACT:

KEYWORDS:

डॉ. रांगेय राघव हिन्दी साहित्य के उन विशिष्ट और बहुमुखी प्रतिभाशाली रचनाकारों में से एक है जो बहुत ही कम उम्र लेकर इस संसार में आऐ, लेकिन इन्होंने अल्पआयु में ही एक साथ उपन्यासकार कहानीकार, निबंधकार, आलोचक, नाटककार कवि इतिहासवेता तथा रिपोतार्ज, लेखक के रूप में स्वयं को प्रतिस्थापित किया। साथ ही साथ अपने रचनात्मक कौशल से हिन्दी की महान सृजनशीलता के दर्शन करा दिये। उपन्यास जगत में डॉ. रांगेय राघव का व्यक्तित्व विशेष महत्व रखता है, वे असाधारण प्रतिभा एवं श्रम शक्ति के प्रतीक है। मानव जीवन में उनकी विशेष आस्था रही है। उनका जीवन हमेशा प्रयोगकर्ता के रूप में रहा है। सत्यन्वेषण, उनके जीवन का मुख्य उद्धेश्य रहा है। राजनीति, धर्म, सामान्य जीवन से सम्बन्ध विभिन्न क्षेत्रों में उन्होंने अनेक प्रयोग किये उनकी रचनाऐं उनके असाधारण पुरूषार्थ, दृढ़ मनोबल एवं अनुशासित कार्यप्रणाली का परिणाम है।

डॉ. रांगेय राघव के उपन्यासों की दो कोटियाँ है, इन्हें हम सामाजिक और समाजवादी कह सकते हैं। समाजवादी अपने मार्क्सवादी दष्टिकोण से प्रेमचन्द के उपन्यासों की सामाजिक परम्परा में आते हुए भी उन उपन्यासों से अलग है। सामाजिक उपन्यासों में सामाजिक उपन्यासों का चित्रण होता है। किन्तु उसे देखने की लेखक की कोई विशिष्ट दृष्टि नहीं होती। वे मनुष्य के प्रति आस्था, प्रेम सहानुभूति एव जीवन मूल्यों को सामाजिकता के साथ आंकलन करते हैं। वे विसमतामूलक समाज को मानव जाति के विकास में बाधक मानते थे। उनके कथा–संसार में उदात चरित्र एवं शिल्प संघटना को क्रान्तिकारी जीवनवृत के रूप में चित्रित किया है। रांगेय राघव के उपन्यासों का वर्गीकरण इस पकार हैः– इसमें सामाजिक उपन्यास, आचालिक उपन्यास, ऐतिहासिक उपन्यास एवं जीवन चारित्रिक उपन्यास। यदि हम सामाजिक उपन्यासों की तरफ एक नजर डालते हैं तो रांगेय राघव ने कई सामाजिक उपन्यास लिख है जैसे – घरोंदे, उबाल, दायरे, आग की प्यास, बोने और घायल फूल, कल्पना, बन्दूक और बीन, पतझर, राई और पर्वत, प्रोफेसर, छोटी सी बात, पराया, पापी एवं आखिरी आवाज।

डॉ. रांगेय राघव के उपन्यासों में विविध सामाजिक समस्याओं पर प्रकाश डालने से पहले समाज क्या है? उसे समझना जरूरी है।

समाज शब्द का प्रयोग साधारणतः जन समुदाय के लिए किया जाता है। शब्दकोशों में इसका अर्थ समूह दल, संघ आदि दिया गया है। अधिकतर समाज शास्त्री समाज शब्द का प्रयोग सामाजिक सम्बन्धों की व्यवस्था हेतु करते है। रयूटर ने कहा है – ''जिस प्रकार जोवन एक वस्तु नहीं है, बल्कि जीवित रहने की पक्रिया हैं उसी तरह समाज एक वस्तु नहीं है अपितु सम्बन्ध स्थापित करने की प्रक्रिया हैं।''[1]

समाज में परिस्थितिवस अनेक परिवर्तन आते रहते हैं जब ये सामाजिक परिवर्तन सामाजिक मूल्यों को तोड़ने लगते हैं, उसी समय सामाजिक समस्या का जन्म होता है। समाज व्यक्ति के समुचित विकास हेतु अस्तित्व में आया है। राबर्ट निसबेट ने सामाजिक समस्या के बारे में लिखा है– ''सामाजिक समस्या वह व्यवहार पद्धति है, जिसे समाज का बड़ा भाग एक या एक अनुमोदित व स्वीकृत प्रतिमानों का उल्लघंन मानता है।''[2]

साहित्य समाज का दर्पण है। साहित्य समाज का ब्यौरा प्रस्तुत करता है। महान साहित्यकार मानव स्वभाव और मनुष्य की स्थिति के बारे में अपनी अन्तदृष्टियाँ प्रस्तुत करते हैं। सामाजिक परिवर्तन कथा साहित्य के माध्यम से संभावित है। समाजशास्त्री अवधारणा कोश में सामाजिक समस्या को परिभाषित करते हुए लिखा है –''ऐसी कोई भी अवांछित तथा आपत्तिजनक दशा, स्थिति अथवा व्यवहार, प्रतिमान जो किसी समाज के अधिसंख्यक व्यक्तियों द्वारा असहनीय एवं निन्दनीय माने जाते हैं। तथा जिसके सुधार एवं निदान के लिए सामुहिक क्रिया की अवश्यकता महसूस की जाती है, सामाजिक समस्या

कहलाती है। सामाजिक समस्याएँ व्यवहारों के टूटने भंग होने अथवा विचलन की शक्ति का परिचायक है। अपराध, अपचार, वैश्यावृत्ति, भिक्षावृत्ति, बेरोजगारी आदि सामाजिक समस्याओं के कुछ उदाहरण है।"[3]

समाज तीन भागों में विभाजित है – निम्न, मध्य और उच्च। भारत में निम्न और मध्य वर्ग की दयनीय स्थिति है। ये दोनों वर्ग सिसकियों ले–लेकर जी रहा है। उन दोनों वर्ग की आपदाओं का वर्णन प्रेमचंद ने अपने कथा साहित्य में यर्थाथ रूप में किया है। युगान्तकारी कथा साहित्य द्वारा भारतीय समाज के कलम के सिपाही प्रेमचन्द ने अनेक मोड दिये। इस दृष्टि से डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी का कथन उल्लेखनीय है–"हिन्दी साहित्य के प्रसिद्ध उपन्यासकार प्रेमचन्द शताब्दियों से पद–दलित और अपमानित कृषकों की आवाज थे। पर्दे में कैद, पद–पद पर लांछित और अपमानित असहाय नारी जाति की महिला के जबर्दस्त वकील थे, और गरीबों बेबसों के प्रचारक थे।"[4] डॉ. रांगेय राघव प्रेमचंद के बाद दूसरे ऐसे सशक्त लेखक थे, जिन्होंने निम्न मध्यम वर्ग का हाथ थामा था, निम्न मध्यमवर्ग की अनेक समस्याओं का चित्रण किया है। साथ–साथ उच्च समाज की विद्रुपताओं को भी उकेरा है। डॉ. रांगेय राघव के उपन्यासों में निम्नलिखित समस्याओं का चित्रण मिलता है।

सामाजिक उपन्यासों में समाज की अनेक समस्याओं को उठाया गया है और उनके समाधानों की और भी संकेत किया गया है। जाति–पाति, अंधविश्वास, किसानों का शोषण, अनमेल विवाह, विधवा समस्या, जातिवादी एवं वर्ग व्यवस्था की समस्या, किसान और मजदूर वर्ग की समस्याऐं आदि का चित्रण प्रखर रूप से किया है।

जातिवाद की समस्या कई हजारों वर्षो से हमारे देश में चल रही है उसके पिछे भारत की पुरानी वर्ण व्यवस्था है। इस समस्या का हल आज तक नहीं निकला आज भी जातिवाद की गन्दगी समाज से नहीं निकली। जिसको दूर करने के लिए कबीर ने 600 वर्ष पहले जहमत उठायी थी, आज भी निम्नवर्ग के लोगों की अपेक्षा होती है। उनका शोषण किया जाता है। गावं में सवर्णों क मंदिरों में जाना उनके लिए वृर्जित हैं। कबीर ऐसे लोगों का पक्ष लेकर लड़े थे। उनका मानना है कि समस्त मनुष्य एक ही तत्व से उत्पन्न हुए हैं सबका सर्जनहार एक ही है, फिर ये हिन्दू, ये मुसलमान, ये ब्राह्मण और ये शुद्र ये भेद क्यो?

जैसे :– "एक पवन एक ही पानी एक ही ज्योति संसारा।।
एक ही खाक घड़े सब भांडे एक ही सर्जनहारा।।[5]

डॉ. रांगेय राघव प्रगतिशील उपन्यासकार है। इसलिए समाज के विकास में जा बाधा रूप सामाजिक बुराईयों पुरानी रूढियों तथा बाह्म आडंबरों की निंदा करते हैं। उनका मानना है कि इन बुराइयों ने समाज को खोखला बना दिया है। इसके जिम्मेदार वे 'पराया' उपन्यास में पूंजीवादी व सांमतवादी प्रवृत्ति को मानते हैं – 'पराया' उपन्यास यें पूंजीवादी समस्या का यथार्थ चित्रण किया है। धन संग्रह की भावना मनुष्य को इतना स्वार्थी और कठोर बना देती है कि वह अपने सम्पूण मानवीय सम्बन्धों को लात मार देता है। रमेश व ममता के माध्यम से लेखक ने यह प्रमाणित किया है कि धन संग्रह की भावना सत्य, असत्य उचित, अनुचित की सीमा को अस्विकार कर आन्तरिक शान्ति के सागर में तुफान उठा देती है। रमेश मालती के साथ विश्वासघात कर अनेक मित्रों को ठगकर गरीबों के पेट पर लात मार कर करोड़पति हो गया हैं किन्तु उसके मस्तिष्क में अशान्ति की भावना बढ़ती गई वह मनुष्यत्व भूलकर धन का दास हो गया –"पूंजीवादी समाज में मनुष्य का उत्थान वास्तव में उसका चारित्रिक पतन है। वह जितना ही धन के कारण सम्मान पाता हैं उतनी ही उसकी आत्मा मरती जाती है। लालच की मिट्‌टी डालकर वह अपनी आत्मा की लाश को ढकता है ताकि वह चिता ही सड़ती रहें, बाहर बदबू न दे"[6] धन लोलुप व्यक्तियों का स्वार्थ इतना प्रबल हो जाता है कि वे प्यार, समाज देश आदि को भूल जाते हैं। ममता रमेश को केवल उसको अकिंचनता के कारण ही ठुकराकर धनी बैरीस्टर बिहारी लाल की वासना की शिकार हो गयी। लेखक ने पूंजीवादी सभ्यता को

मानवता के लिए अभिशाप माना है और खुलकर निंदा की है ''पूंजीवादी सभ्यता गद्दे तकियों पर लेटने वाली वेश्या के समान है जब वह पैसा नहीं रखती तो पत्थरों पर लेटती है।''[7]

'पंतझर' उपन्यास में डॉ. रांगेय राघव ने प्रमुख एवं **जटिल समस्या जातिवाद** को माना है जिसे लेखक ने बड़े कौशल के साथ चित्रित किया हैं और उसके होने वाले दुष्परिणामों का भी चित्रण किया है। जगन्नाथ और मोहिनी एक दूसरे को चाहकर सामाजिक अवरोधों के कारण भी वैवाहिक सम्बन्ध स्थापित नहीं कर पाते हैं। डाक्टर के पूछने पर जगन्नाथ कहता है – ''मैं पहुंच सकता हूँ, डॉक्टर सहाब लेकिन मैं इन समाज के बन्धनों का क्या करूं? वह मुझे चाहती है, लेकिन मेरे पास आ नहीं सकती। यह समाज हम लोगों को घोंटकर रख रहा है। ऐसा लग रहा है कि जैसे सांस दबी जा रही है।''[8] इसके माध्यम से लेखक ने जातिवाद के मिथ्याभिमान को स्पष्ट किया है। डॉक्टर हरवंशलाल से कहता है कि मैं आपको एक बात बता दूँ कि हिन्दुस्तान में इनती उँची–नीच होते हुए भी हर जाति का आदमी अपनी जाति को दुसरी जाति से कम नहीं समझता। आप एक धोबिन से ब्याह नहीं कर सकते भले ही आप कायस्थ हो। आपको भंगी भी अपनी लड़की देने को तैयार नहीं होगा इसलिए कि उसकी भी मर्यादा है।[9] ''इस गूढ समस्या का समाधान लेखक ने अर्न्तजातीय विवाह में देखा इसलिए उपन्यास के अन्त में जगन्नाथ व मोहिनी का विवाह कर लौकिक प्रेम का समाधान विवाह से ही किया है। यहा अर्न्तजातीय विवाह कराकर डॉ. रांगेय राघव ने प्रगतिवादी चेतना का उदाहरण दिया है।

''कल्पना'' उपन्यास में **आधुनिक नारी की समस्या** का चित्रण है, लेखक ने नीला के माध्यम से जीवन क सार्वभौम प्रश्नों की सफलता की अभिव्यक्ति देकर हमारे सम्बन्धों की वास्तविकता पर नया प्रकाश डाला है। उपन्यास में नीला और डॉक्टर के माध्यम से इस समस्या को अत्यन्त प्रभावोत्पादक ढंग से उठाया है। डॉक्टर समाज के दबाव में आकर नीला से विवाह कर लेता ह। किन्तु रागात्मक सम्बन्ध प्रेमिका निर्मला से ही रखता है। वह अपने पर थोपी पत्नी नीला से कहता है – ''मैं कोई पाप नही करता निर्मला भी पाप नहीं करती स्त्री–पुरूष प्रेम करने को स्वतंत्र है हमको हमारे समाज ने किस लिए बांधा है? तु मेरे लिए एक अनजान स्त्री हो तुमसे मैं प्रेम नहीं कर सकता वह व्यभिचार होगा।''[10] इससे नीला को अत्यन्त मार्मिक पीड़ा हुई है। नारी ही नारी को अधिक प्रताड़ित करती है यह बात इस उपन्यास से स्पष्ट होती है यदि निर्मला डॉक्टर के प्रेम प्रस्ताव को ठूकरा देती तो नीला का हृदय आहत न होता। नीला एवं वकील की उपस्थिति डॉक्टर और निर्मला के लिए असहन्य होती गई। अन्ततः समाज से भयभोत होकर दोनों पात्र मिलकर एक होटल में आत्महत्या कर लेते हैं। आज भी अनेक युवक–युवतियों समाज की रूढियों को तोड़ने में असमर्थ होकर अपनी भावुकता के कारण आत्महत्या कर लेते हैं। लेखक ने अनमेल विवाह के दुष्परिणामों को व्यक्त कर समाज की थोथी मान्यताओं पर गहरा प्रहार किया है।

''काका'' उपन्यास में **विधवा समस्या** को चित्रित कर उसका समाधान किया गया है। विधवा समस्या तो समाज में आज भी विधमान है। सामति समाज ने मातृसत्तात्मक परिवार को पितृसत्तात्मक परिवार म बदलकर नारी शोषण की शुरूआत की जो आज भी विधमान है। नारी का वैधव्य जीवन भारतीय समाज के लिए अभिशाप हैं, इन समस्याओं को प्रेमचंद से लेकर आज तक लिखने वाले लेखक इस समस्या का चित्रण करते रहे। डॉ. रांगेय राघव के 'काका' उपन्यास की पात्र कान्ता का जीवन इसी घुटन में व्यतीत हो रहा है। किन्तु यह अधिकांश उपन्यासों की विधवाओं की भांति तपस्विनी न बनकर रामधुन के प्रेम को स्वीकार कर लेती है। तदन्तर सामाजिक बन्धनों को ठुकराती हुई रामधुन से कहती है :–

''भले ही यह पाप है पर यही अच्छा। मेरे वैश्या बनने से या चेली बनने से यह पवित्र है, स्त्री हूँ तथा स्त्री जैसा जीवन क्यों न बिताऊं? अगर धर्म इसे नहीं मानता तो धर्म गलत है। इन लोगों ने धर्म को भी अपने नफे–नुकसान की चीज बना लिया है।''[11]

लेखक ने तत्कालीन समाज में व्याप्त विधवा समस्या का चित्रण ही नहीं किया बल्की उस समस्या का हल एवं विद्रोह कैसे कर सकते हैं यह भी बताया।

डॉ. रांगेय राघव ने जातिवाद का विरोध किया था। उपन्यासकार ने देखा स्वर्ण समाज दलितों, मजदूरों, शोषितों का भरसक शोषण करते हैं फलतः दलितों के शोषण का चित्रण उनके लगभग सभी उपन्यासों में मिलता है 'बोने और घायल फूल' उपन्यास में **दलितों की उपेक्षा का यथार्थ चित्रण** मिलता है। उपन्यास में नील बाबू द्वारा हरिजनों के मंदिर में प्रवेश के लिए सत्याग्रह कराया गया। मंदिर में हरिजनों का प्रवेश निषेध था। भारत के संविधान में सबको समान दृष्टि से देखने की बात कही गई है। जातिय धर्म के आधार पर भेदभाव करना गलत है, पर इसके बावजूद जातिगत भेदभाव पनप रहा है और सामाजिक समानता का प्रश्न भी बना हुआ है। "घरौंदा" उपन्यास में जमीदार से भगवती को समाज की जिलाहना और उपेक्षा का शिकार होना पड़ता है। उसे समानाधिकार से वंचित रहना पड़ता है। "आखिरी आवाज" में चमार, भंगी जैसी अछूत कही जाने वाली जातियाँ गर्णित धन्धों से अपना पट भरती है। मरे पशुओं की चाम उतारना, मैला ढोना जैसे निम्न कर्म इनकी आजीविका के साधन है। 'कब तक पूकारू' उपन्यास में भी चमार मृत पशुओं की खाल उतारते हैं तो भंगी मैला ढोने का धन्धा करते है। "राई और पर्वत" में कटोरी मेहतरानी झाडू लगाकर ऊँची जातियों से रोटी प्राप्त करने का कार्य करती है।

'धरती मेरा घर' उपन्यास में लेखक ने **अंधविश्वास** की ओर संकेत किया है–"जमींदार साहब अपने बच्चें के बारे में बताते हैं कि वह फतेहपुरी सीकरी के किसी फकीर की दुआ से पैदा हुआ था।"[12]

"स्त्रीयाँ सनीचर के सनीचर परिक्रमा देती है गाँव की"[13] 'हूजूर' उपन्यास में ग्रामीण अंधविश्वास से ग्रसित है – 'गांव नरहर' "सदियों से बहती हुई धारा के किनारे खड़े हुए किसी रहस्य के अधंविश्वास के पेड़ के समान है यह रहस्य का अंधविश्वास बनकर पड़ा था। कहा जाता है कि देवता के सामने एक बहुत बड़ा चक्र धमता रहता है। उसमें अनगिनत मनुष्यों के लेखे–जोखे की चिट्टियाँ लटकती रहती है। परन्तु हिन्दूस्तान के लाखों गाँवो के भाग्य की चिट्टी एक है। वह सैकड़ों बरस से घूम रही है, इस पुराने वृक्ष में अनेक विषैले जीव–जन्तु है। मजबूरी है, पंछी इन्ही का भोजन बनने के लिए बार–बार अण्डे देते है। बार–बार हाहाकार करते हैं।" इससे स्पष्ट होता है कि शोसित वर्ग भाग्यवाद, निराशावाद एवं अंधविश्वास के चक्र में फंसा हुआ है। इसके लिए पूण्य और पाप की धारणाएँ अंधविश्वास के चारों और लिपटी रहती है। इस वर्ग के पुण्य कार्य की सीमा गंगा स्नान, तीर्थ–भ्रमण और देव दर्शन तक ही है सीमित है। अतः धार्मिक अंधविश्वास ही धार्मिक शोषण की समस्या पैदा करता है।

अतः हम निष्कर्ष के तौर पर कह सकते हैं कि डॉ. रांगेय राघव ने अपने उपन्यासों में विभिन्न प्रकार की समस्याओं एवं उनके निराकरण का चित्रण किया है। आर्थिक समस्याएँ, राजनीतिक समस्यां, शिक्षा की समस्याएँ आदि का भी चित्रण अपने उपन्यासों में किया है।

लेखक का मानना है कि कितनी ही बड़ी समस्या क्यों न हो उसका सामना डटकर करना चाहिए, उस समस्या का जवाब मह तोड़ देना चाहिए, जिससे समस्या का समाधान किया जा सक। इसके लिए हमें शारीरिक रूप से मजबूत हस्टपुष्ट बनना पड़ेगा, मानसिक रूप से तैयार होना पड़ेगा। अंधविश्वास, गुलामी से दुर जाना पड़ेगा, मंदिरों के बजाय स्कूलों की और ज्यादा ध्यान देना होगा तभी आगे चलकर नयी पीढी में कुछ नया संचार होगा, नई भावनाऐं जन्म लेगी।

REFERENCES

1. डॉ. अजमेर काजल, उपन्यासकार राजेन्द्र यादव (समाजशास्त्रीय अध्ययन) पृ.–5

2. डॉ. अजमेर काजल, उपन्यासकार राजेन्द्र यादव (समाजशास्त्रीय अध्ययन) पृ.–15

3. हरिकृष्ण रावत समाजशास्त्र कोश पृ.–152

4. सच्चिदानन्द हीरानन्द वात्स्यायन, साहित्य और समाज के परिवर्तन की प्रक्रिया, पृ.–79

5. हजारी प्रसाद द्विवेदी – 'कबीर', पृ.–17

6. डॉ. रांगेय राघव – 'पराया', राजपाल प्रकाशन, पृ.–90

7. डॉ. रांगेय राघव – 'पराया', राजपाल प्रकाशन, पृ.–90

8. डॉ. रांगेय राघव – 'पतझड़', राजपाल प्रकाशन, पृ.–26

9. डॉ. रांगेय राघव – 'पतझड़', राजपाल प्रकाशन, पृ.–79, 80

10. डॉ. रांगेय राघव – 'कल्पना', राजपाल प्रकाशन, पृ.–40

11. डॉ. रांगेय राघव – 'काका', राजपाल प्रकाशन, पृ.–164

12. डॉ. रांगेय राघव – 'धरती मेरा घर', राजपाल प्रकाशन, पृ.–20

13. डॉ. रांगेय राघव – 'धरती मेरा घर', राजपाल प्रकाशन, पृ.–20

14. डॉ. रांगेय राघव – 'ह़ज़ूर', आलोक प्रकाशन पृ.–69